श्रुतदीप रिसर्च फाउंडेशन का संवाद-सेतु

श्रुतदीप

॥ सुयं मे आउसं ॥

विक्रम संवत २०७८ • वर्ष : ६ • अंक : २ • अक्तुबर २०२२

-शिक्षाशतदोधक

श्रुतरत्न गणिवर श्री वैराग्यरतिविजयजी म.सा.

शास्त्रों में साधना के दो मार्ग बताये हैं- व्यवहारमार्ग और निश्चयमार्ग। व्यवहारमार्ग तप, जप, क्रिया, आचरण आदि को महत्त्व प्रदान करता है। निश्चयनय ज्ञान और उसके आधार पर संस्कारित पुख्ता समझ को प्राथमिकता देता है। ये दोनों नय अपनी-अपनी जगह महत्त्वपूर्ण हैं। ऊपरी नजर से भले यह दिखाई पडता है कि, ये दोनों परस्पर विपरीत हैं मगर फिर भी एक-दूसरे के पूरक हैं।

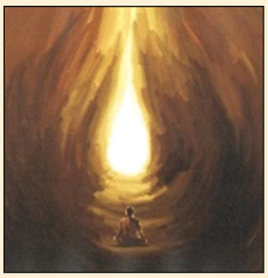

यदि साधक दोनों नयों को एक-दूसरे का पूरक बना पाए तो साधना का स्वाद और साधना के फल दोनों प्राप्त कर सकता है। प्रारंभिक कक्षा के साधक व्यवहार और निश्चय का समन्वय नहीं कर पाने के कारण या तो व्यवहार को अधिक महत्त्व देते हैं अथवा निश्चय की तरफ उनका ध्यान अधिक होता है। अधिकतर प्रारंभिक साधक व्यवहार को मुख्य और एकमात्र साधना मार्ग समझकर साधनारत हो जाते हैं। समन्वय के अभाव में यदि व्यक्तिगत समझ आग्रह में बदल गई तो मार्ग भटक जाएगा। ऐसी स्थिति पैदा न हो इस लक्ष्य को ध्यान में रखकर अनुभवी साधक समय-समय पर निश्चय नय का समान महत्त्व समझाते हुए शास्त्र की रचना करते हैं।

यह ग्रंथ **शिक्षाशतदोधक**, पुरानी गुजराती भाषा में रचित निश्चयनय की महत्ता समझाता ग्रंथ है। १८ वीं सदी में **उपाध्याय श्री हंसरत्न गणी** द्वारा रचित है। शिक्षा अर्थात् निश्चयनय का शिक्षण और शत अर्थात् शतका दोधक अर्थात् दोहे। इस कृति में कुल एक सौ आठ दोहें हैं। ग्रंथकार ने इसमें जैन एवं अजैन मत-संप्रदाय की उपासना पद्धतियों का अनुसरण करने वाले साधक को अपनी नजरों के सामने रखकर इसकी रचना की है।

सर्वप्रथम ग्रंथकार ने अनुभव का माहात्म्य प्रस्तुत किया है। ग्रंथ की शुरुआत में ही उन्होंने परमात्मा को अनुभवगम्य रूप में देखा है। इसके बारे में नौवें दोहे में वे कहते हैं- **करोडों वर्षों तक तप करो और अनंत शास्त्रों का अभ्यास करो मगर अनुभव के अभाव में सब व्यर्थ है।** अपनी बात के समर्थन में उन्होंने कबीर का दोहा भी जोडा है। **परमात्मा के नाम भले अलग-अलग होंगे मगर उनका स्वरूप तो एक समान है और वह है- वीतरागी। प्रत्येक धर्म में परमात्मा को सांसारिक उपाधियों से पर मानने में आया है। धर्म की उपासना पद्धतियों का आयोजन परमात्म-तत्त्व की उपलब्धि के लिए किया जाता है। केवल क्रिया करने से परमात्मा की उपलब्धि नहीं हो जाती।** (१४-१५) आत्मा का अनुभव परमात्मा की प्राप्ति का परम उपाय है। आत्मा की अनुभूति करने के लिए सद्गुरु की जरूरत पडती है। **सद्गुरु की शिक्षा के अभाव में तप, व्रत, दान आदि सब निष्फल हो जाते हैं। संसार समुद्र स्वरूप है, जीवन नाव है और सद्गुरु नाविक हैं। गुरु के बिना जीवनरूपी नाव को स्थिर रख पाना संभव नहीं है। (१४-१५) सद्गुरु ज्ञानरूपी सली से अंतर में चिपके मोह की परतों को उतारकर बाहर फेंक देते हैं और अंतरदृष्टि जागृत करते हैं। (१६) अपना सर्वस्व समर्पित करके युगों तक गुरु के चरण की सेवा की जाए तब भी उनके उपकारों से मुक्त होना संभव नहीं है। (१७) गुरु के गुण अनंत है। जिन्हें एक जीभ से गाया नहीं जा सकता। गुरु सच्चा बोध देकर शिष्य के अगाध संसार को गाय के पैर तले की जमीन जितना छोटा कर देते हैं। (१८)**

गुरु चंदन जैसे हैं जो स्वयं गुणों से सुवासित हैं और दूसरों को भी उन गुणों से सुरभित बना देते हैं। (२०)

ग्रंथकार ने यहां गुरु का महिमागान करते हुए गुणरहित गुरु से बचने की सतर्कता भी बतायी है। गुरु का वेष धारण कर लेना आसान है, गुरुपद धारण कर लेना भी सरल है, गुरु नाम धारण करना भी आसान है मगर सच्चा गुरु बन पाना काफी कठिन है। सच्चे गुरु और गुणरहित गुरु के बीच केवल आचार अथवा व्यवहार का ही अंतर नहीं होता, बल्कि बोध का भी अंतर होता है। **कोई व्यक्ति बगैर गुरु बनाए स्वयं गुरु बनकर कभी किसी को संसार पार नहीं करवा सकता। ऐसे गुरु तो लोहे की शिला जैसे हैं। सच्चे गुरु लकडी की नाव जैसे होते हैं। कलिकाल में गुण बिना के गुरु काफी मिल जाएंगे। अगर गुरु और शिष्य के बीच परस्पर विवेक नहीं होगा तो दोनों खाई में गिरेंगे।**

यहां प्रसंगानुकूल दोहाकार खुली आंख वाले और अंध व्यक्ति की तुलना की सुंदर व्याख्या बताते हैं- **जिसे जगत में सभी जीव अपने जैसे दिखायी देते हैं, जिसे परस्त्री माता दिखायी देती है और पराया धन धूल जैसा दिखता है वह आँखवाला है। मगर जो परस्त्री को बूरी नजर से देखता है और दूसरों को पीडा देता है वह आँख होकर भी अंधा है।(२४-२५) जिसका हृदय सरल हो, कदाचित वह पढा-लिखा न भी हो फिर भी वह श्रेष्ठ कक्षावाला है और जो पंडित-कक्ष का होकर भी मैले मन वाला हो तो उसकी बुद्धि उसे मुबारक। (२८) आत्मार्थी साधक के लिए सद्गुरु की प्राप्ति काफी महत्त्वपूर्ण होती है। गुणरहित गुरु का अनुयायी साधक यहाँ-वहाँ भटकता रहता है, उसकी प्रगति रुक जाती है और अपने लक्ष्य से भी वंचित रह जाता है।(३०-३१)**

अनेक साधक ऐसे भी होते हैं जिनका लक्ष्य आत्मसाधना के बजाय आत्मप्रशंसा होता है। वे गुरु के पास बोध लेने के बजाय अपनी महिमा बढाने आते हैं। गुरु की वाहवाही करके गुरु के समक्ष अपना प्रभाव जमाना चाहते हैं। गुणरहित गुरु और साधना का लक्ष्य रहित शिष्य जिस नाव में एक साथ बैठते हैं, उसको डूबा देते हैं। वे अन्य लोगों को भी डूबा देते हैं। साधना की ईच्छारहित साधक गुरु के पास ज्ञान लेने नहीं आता है। उसे गुरु के उपदेश में रस नहीं होता है। वह व्यक्तिपूजक बन जाता है। शिक्षाशत दोहे में उपाध्यायजी श्री हंसरत्नगणी बहुत सटीक बात कहते हैं-

जिस तरह सन्निपात जैसे असाध्य रोग पर कोई दवाई नहीं होती उसी भाँति अयोग्य, अर्थात् स्वार्थी और पूर्वग्रह-ग्रसित शिष्य के लिए कोई उपदेश काम नहीं आता है। उल्टा उसके कारण उपदेशक को क्लेश होता है। अयोग्य व्यक्ति आत्मा की सच्ची बात सुनने में असमर्थ रहता है। कदाचित सुन ले मगर पचाने में असमर्थ होता है। ऊपर से दलीलें देकर उपदेशक को हैरान भी करता है। (३२) ऐसे अयोग्य साधक पूर्वग्रह अथवा व्यक्तिराग से पीडित बने रहते हैं। जिस तरह बूरे मंत्र से वशीभूत व्यक्ति अपनी ही विष्ठा खाता है उसी तरह अयोग्य साधक संसार की विष्ठा जैसी बातों में रस लेता है। (३३) सद्गुरु को उनकी वृत्ति देखकर दया आती है, उसकी विपरीत प्रवृत्ति को देखकर उसे सच्ची समझ देने का यत्न करें तो साधक गुस्सा करता है। चल-विचल होता है। (३४) अयोग्य व्यक्ति को सलाह देने से केवल नुकसान ही होता है, ऐसी सलाह देते हुए दोहाकार कहते हैं-**सांप को कितना भी दूध पीलाओ वह डंख मारने से बाज नहीं आता है। अयोग्य व्यक्ति अच्छी बात सुनकर भी क्रोध करता है।** (३५-३६)

साधक अयोग्य इसलिए बनता है कि उसे सच्ची समझ नहीं मिली होती है। समझ सच्ची हो तो कदाग्रह पैदा नहीं होता है। जिनके पास सच्ची समझ है उनका लक्ष्य आत्मा होती है। वे आत्मा की शोध का मार्ग ढूंढते हैं। उनके व्यक्तित्व और विचारों में शास्त्रों का सार झलकता दिखायी पडता है।

जिनका लक्ष्य आत्मा नहीं है उन्हें शास्त्र की जरूरत भी नहीं होती। उनकी बातों में एक तरफ लोकरंजन और दूसरी तरफ आत्मार्थी साधकों के प्रति निंदा भाव छलकता रहता है। (३७) कौए को सरोवर का पानी पसंद नहीं होता। उसे गंदे नालों में ही

मजा आता है। उसी तरह आत्मा के लक्ष्य से भटके साधक को शास्त्रों की बात पसंद नहीं होती है। (३८) मोक्षमार्ग में आगे बढने के लिए शास्त्र शक्तिरूप संबल है (मार्ग में खुराक की तरह)। जब अंधेरा छाने लगे तब शास्त्र दीपक बनकर मार्ग को उजागर कर देते हैं। जब कभी मति मुरझाने लगे तब शास्त्र सच्ची समझ देते हैं। मोक्षमार्ग पर प्रयाण करते समय अशक्ति अथवा आसक्ति के कारण थकान महसूस होने लगे तब शास्त्र विश्रामधाम बनकर आधार देते हैं। नयी स्फूर्ति के साथ आगे बढने की प्रेरणा देते हैं। जो शास्त्र की अवगणना करते हैं उनका उद्धार असंभव है। (३९)

जिनके मन में कदाग्रह है उनकी बुद्धि वाममार्ग पकडती है। उन्हें आत्मा की बात में रस नहीं होता है। उन्हें पद-प्रतिष्ठा, परिवार और प्रशंसा में आनंद दिखता है। सच्ची बात सुनने के लिए उनके पास समय नहीं होता है। उन्हें यह भी पता नहीं रहता कि उनकी बातें कितनी खोखली होती है? विचारों का केंद्र सत्यलक्षी नहीं होने के कारण उनकी बातें व्यक्तिलक्षी बन जाती है। अपनी बात को सच्चा साबित नहीं कर पाने के कारण दूसरों की निंदा करने लगते हैं। (४१-४२)

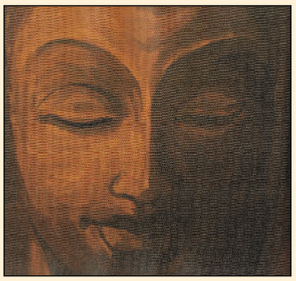

रक्त पीनेवाला जंतु, चालनी, बूरा व्यक्ति और मक्खी इन चारों का स्वभाव एक ही जैसा होता है- सारपूर्ण बातों का त्याग और असार वस्तु के प्रति स्वीकार भाव। जबकी प्रतिपक्ष में हंस, सूपडा और श्रेष्ठ मनुष्य ये तीनों का स्वभाव एक जैसा होता है- सार को ग्रहण करना और असार को छोड देना। (४३-४४)

क्या कदाग्रही व्यक्तियों की निंदा से डरकर सच्चे साधक ने आत्मा की/ शास्त्र की बात करना छोड देना चाहिए? इस प्रश्न का जवाब देते हुए उपा. श्री हंसरत्नगणी कहते हैं- निंदा करने वाले भले निंदा करते रहें। जो लोग धर्म का विचार करने के बदले दूसरों की निंदा करते हैं वे अपने ही हाथों से अपने मस्तक पर राख डालते हैं। ऐसे लोगों की निंदा के कारण सच्चा साधक आत्मा की / शास्त्र की बात करना छोड नहीं देता है। जिस तरह विवाह गाजे-बाजे के साथ लोगों के बीच होते हैं उसी तरह शास्त्र की बात भी धूमधाम से जाहिर करनी चाहिए। (४५-४८)

इतनी विस्तृत प्रस्तावना रखने के बाद दोहाकार मूल बात का जिक्र करते हैं- दया, दान, संयम, देवगुरु की भक्ति, क्षमा, सरलता, अहिंसा, सत्य, तप, विनय, ब्रह्मचर्य ये सब वास्तविक धर्म हैं। तीर्थ में जाकर स्नान करना, शरीर पर राख लगाना, जंगल में बसकर-जटा बढाकर और कष्ट उठाकर माला फेरना ये सब धरातल की क्रियाएँ हैं। वास्तविक धर्म तो आत्मा में खिलते गुण हैं। तमाम धर्मों का मूल अहिंसा है। किसी के दुःख का कारण नहीं बनना यह अहिंसा की विभावना है। (४९-५२) जहाँ हिंसा है वहाँ धर्म है ही नहीं। जिस तरह विष खाकर अमर होने की उम्मीद बेकार है। उसी भाँति हिंसा करके धर्म की आशा रखना व्यर्थ है। (५३)

अहिंसा की सच्ची समझ तत्त्व के ज्ञान से मिलती है। मुक्ति का एक ही कारण है- तत्त्व का अभ्यास। (५६)

यहाँ प्रसंगानुगत ग्रंथकार अन्य मत के सृष्टिवाद और अवतारवाद की समीक्षा करते हुए कहते हैं- मोक्षमार्ग के तीन अंग हैं- देव, गुरु और धर्म। देव दोष रहित होने चाहिए। संसारी मनुष्य में दिखायी देते दूषण देव में नहीं होने चाहिए। गुरु सर्वसंग के परित्यागी होने चाहिए और धर्म में विवेक और दया ये दो विशिष्टताएं होनी चाहिए। साधक के लिए तीनों बातें मोक्षमार्ग में सहायभूत बनती है। जहाँ माया है वहाँ ज्ञान नहीं है मगर जहाँ ज्ञान है वहाँ माया नहीं होगी। अंधकार और प्रकाश में जितना अंतर है उतना ही फर्क ज्ञान और माया में है। (५९-६०)

अनेक मतों में ईश्वर माया रचते हैं ऐसी मान्यता है। ईश्वरवाद में ईश्वर को पूर्णश्रेष्ठ और अविकारी माना जाता है। अगर ईश्वर पूर्ण है तो माया क्यों रचता है? (६१) ईश्वरवादी की दलील है कि- ईश्वर तो एक ही है मगर उसके विविध अंश अवतार धारण करते हैं। अवतार यह पूर्ण अवतार नहीं है। ईश्वर का एक अंश है। यह बात भी समझ से बाहर है, क्योंकि ईश्वर और ईश्वर का अंश एक ही है और अवतार की तरह अन्य जीवात्मा भी ईश्वर का ही अंश है। फिर तो इस कारण उन्हें भी ईश्वर के रूप में पूजा जाना चाहिए। दूसरी बात, खदान में रहा हुआ अशुद्ध सोना भी सोना ही है मगर अशुद्ध होने के कारण उसकी असली किंमत नहीं आंकी जा सकती। उसी भाँति अवतार रूप रागादि से मलिन है तो उसे ईश्वर रूप पूजने से क्या लाभ होगा? (६०-६६)

ईश्वरवाद में और अवतारवाद में शुद्ध परमात्मा को अशुद्ध बनाने की बात है। इस तथ्य से तो अवतारवाद में उपासना पद्धति भी रागादि दोष बढाने वाली है।

अशुचि से भरी देह नदी में स्नान करने से शुद्ध हो जाती है, यह बात भी समझ में नहीं आ रही है, कारण आत्मा और देह के बीच ऐसा संबंध नहीं है कि, एक को शुद्ध करने से दूसरा भी शुद्ध हो जाए। (६१-७४) कलिकाल में देव, गुरु, धर्म के विषय में अवास्तविक अवधारणाएँ चल रही हैं। कलिकाल के प्रभाव से कोई स्वयं की जाति को ऊँचा मानता है। कोई विद्या, मंत्र, तंत्र प्राप्तकर स्वयं को सर्वश्रेष्ठ मान रहा है और लोगों को भी ये बातें पसंद है। उनके सामने उनकी भूल बताना शक्य नहीं है और

पीठ पीछे बोलना निंदा कहलाता है। भूल सुनकर भी वे लोग सुधरनेवाले नहीं हैं और ऊपर से दुःखी होते हैं। इसलिए किसी की भूल बताना भी अच्छी बात नहीं है। वैसे देखा जाए ते पूरा दोष कलिकाल का नहीं है क्योंकि इस काल में अच्छे और विचारक लोग भी विद्यमान हैं। अयोग्य जीव हमेशा निर्लज्ज और निशंक रहते हैं। उन्हें स्वयं के दोष और दूसरों के गुण दिखायी नहीं देते। आत्मार्थी जीव की दृष्टि अपने अवगुणों और दुसरों के गुणों पर भी होती है। ऐसे लोग दोष छोड देते हैं और गुणों का स्वीकार करते हैं। ऐसे लोग व्यक्तिगत राग-द्वेष से परे रह सकते हैं। (७५-७८)

अनंत जन्मों से जीव संसार में भटकता रहा है मगर तत्त्वज्ञान की तलाश नहीं होने से उसके दुःख का अंत नहीं हुआ। दुनिया के तमाम शास्त्र एक ही बात करते हैं- मुक्ति का मार्ग तत्त्वज्ञान है। तत्त्वज्ञान से विवेक जन्म लेता है। विवेक के आधार पर अच्छे-बूरे की तुलना होती है और आत्मा विकास करती है। तत्त्वज्ञान के अभाव के कारण अनेक लोगों का जन्म निष्फल जाता है। (८०-८५) तत्त्वज्ञान प्राप्त करने के लिए मध्यस्थ भाव चाहिए, परीक्षक वृत्ति चाहिए, मानसिक स्थिरता चाहिए (ममत्व के कारण मन अस्थिर रहता है।) और आत्मा की जिज्ञासा चाहिए। जिसे किसी मत का आग्रह नहीं, जिसे शास्त्र का अभ्यास करने की तैयारी है और जिसकी दृष्टि निर्मल है वह परमार्थ साध्य करता है। (८७-८८) परखे बगैर कोई सादी झाडू भी नहीं खरीदता। उसके सामने भवोभव की खुराक जैसा पौष्टिक धर्म परीक्षा बगैर कैसे प्राप्त किया जा सकता है? विश्व के सभी शास्त्र धर्म की परीक्षा करने की बात करते हैं। परंपरा से कुल, वर्ण, जाति में चले आ रहे धर्म की कसौटी क्या है? यह धर्म संपूर्ण नहीं है। जहाँ आत्मा की पहचान होती है उसका नाम धर्म है। (८९-९२) एक बार तात्त्विक दृष्टि प्रगट होने के बाद ही शास्त्र का परमार्थ हाथ लगता है। तात्त्विक दृष्टि प्राप्त होना काफी कठिन बात है। तात्त्विक ज्ञान, सम्यग्ज्ञान और विवेक से प्रगट होता है। मिथ्यात्व और अभिमान तत्त्वदृष्टिको रोकते हैं। (९३-९४)

दोहाकार ने तत्त्वदृष्टि की प्राप्ति के लिए चार अनुपम उपाय दर्शाये हैं। यहाँ तत्त्वदृष्टि का अर्थ अनुभव समझना है। अनुभव अर्थात् शब्द, विचार और भावनाओं से अलग किसी वस्तु का साक्षात्कार। पानी ठंडा है यह हमें पता है मगर उसे स्पर्श करने के बाद वास्तव में पानी ठंडा लगता है यह अनुभव है। इसी भांति आत्मा के बारे में भी हमने काफी सुना है, आत्मा के बारे में हम जानते भी हैं मगर उसका अनुभव हमारे पास नहीं होता है। उपाध्याय श्री हंसरत्न गणी यहाँ ऐसे ही अनुभव की बात करते हैं। आत्मा का

अनुभव करना है तो श्रद्धा, जिज्ञासा, सद्गुरु समागम और अभ्यास इन चार बातों को जीवन में स्थान देना पडेगा।

विश्व दो प्रकार का हैं पहला, बुद्धि का विश्व जिसे हम देख पाते हैं। दूसरा है श्रद्धा का विश्व, उसे हम नहीं देख पाते हैं। कुछ बातें हम देख नहीं पाते हैं मगर निश्चय कर लिया तो देखना भी आसान है। सेवफल दिखायी देता है, उसमें छिपा बीज दिखाई नहीं देता मगर चाहें तो देख सकते हैं। मुख्य बात यह है कि, एक बीज में कितने सेवफल उगाने (पैदा करने की) की शक्ति है? यह बात हम कितना भी निश्चय कर लें उसे जानना असंभव है। जो जगत दिखायी पडता है उसके क्षेत्र की सीमा बुद्धि है। जो नहीं दिखता वह श्रद्धा का क्षेत्र है।

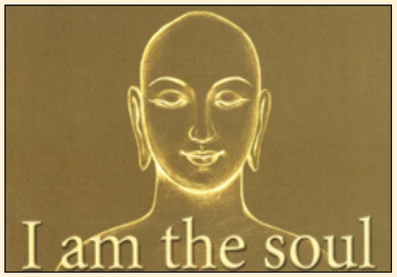

हमारी आत्मा बीज में छिपी शक्ति जैसी है उसे बुद्धि द्वारा देखना या मापना संभव नहीं है। सामान्य व्यक्ति को केवल बुद्धि से जो दिखायी दे रहा है वही सब स्वीकार है। आत्मा श्रद्धा का विषय है, इसलिए आत्मा का अनुभव करने के लिए 'आत्मा है' इस बात पर पहले श्रद्धा रखना जरुरी है।

आत्मा के अनुभव का दूसरा उपाय है-**जिज्ञासा।** "मेरी आत्मा कैसी है।" यह जानने की ईच्छा। एक बार 'आत्मा है' यह बात स्वीकार हो जाये, फिर आत्मा के विषय में प्रश्न जन्म लेते हैं। मैं इस शरीर में कैसे आया? किस प्रकार आया, शरीर चला जाने के बाद मैं कहां जाऊंगा, क्या शरीर के बगैर भी मेरा अस्तित्व हो सकता है। मैं शरीर में क्यों आया, शरीर में मेरा क्या काम था? मेरे जीवन में दु:ख क्यों है? मैं आत्मा हूं, तो मेरी आत्मा मुझे दिखायी क्यों नहीं देती? आत्मा को जानने के लिए मुझे क्या करना चाहिए? जब मन में इन प्रश्नों की हलचल शुरु होगी, तब ही आत्मा की यात्रा का शुभारंभ होगा।

तीसरा उपाय है-**सद्गुरु का समागम।** आत्मा से संबंधित प्रत्येक प्रश्न का जवाब केवल उसी के पास मिल सकता है, जो आत्मा को जानता है और आत्मा में ही जीता है। ऐसा व्यक्ति गुरु बनकर भीतर की यात्रा का मार्गदर्शन करवा सकता है। इसलिए **सद्गुरु** का समागम आत्मा के अनुभव के लिए काफी जरुरी है।

आत्मा के अनुभव का चौथा उपाय है- **दृढ अभ्यास।** आत्मा का साक्षात्कार केवल चर्चा करने से संभव नहीं है। जगत के आकर्षणों से बाहर आने के बाद ही आत्मा की दिशा दिखायी पडेगी। सामान्य व्यक्ति के लिए उसमें से बाहर आना काफी कठिन है। निरंतर शास्त्राभ्यास करने से जगत का आकर्षण फीका पडता है। शास्त्रों में आत्मा के संदर्भ की बातें पढने से, सुनने, कहने और चिंतन करने से विवेकदृष्टि निर्मल बनती है। ध्यान करने से एकाग्रता बढती है। बुद्धि सूक्ष्म बनती है। सूक्ष्म बुद्धि से शास्त्रों के अर्थों की गहराईयों का अनुभव होने लगता है। इन सब बातों का पुनरावर्तन करने से थोडे समय पश्चात आत्मा के अनुभव की शुरुआत होने लगती है। आत्मा के अनुभव का यह सरलतम उपाय है। **स्वाति नक्षत्र की वर्षा का एक बुंद पानी सींप में पडते ही उत्तमकोटि का मोती बन जाता है, यह प्रभाव स्वाति नक्षत्र का है। सद्गुरु के प्रभाव से साधक थोडे से प्रयत्न से भी अनंतगुण प्रगट कर लेता है। हमारे अस्तित्व का केंद्रबिंदु आत्मा है। वह केंद्र शक्ति रूप में व्याप्त है जो दिखायी नहीं देता। दूध में दही है, दही में माखन है। दही को मंथन किए बगैर माखन प्रगट नहीं होता है। उसी भाँति सतत चिंतन करने से हमारे भीतर रही आत्मा प्रगट होती है।** (९५-१०१)

उपसंहार करते हुए दोहाकार कहते हैं-**यहाँ जो बाते कहीं है उसमें स्वमत का आग्रह नहीं है। केवल स्व-पर दोनों के हितार्थ मोक्षमार्ग की शुद्धि बतायी है। प्रस्तुत कृति ज्ञानी व्यक्ति के हाथ में पहुँचे तो अमुल्य बनेगी। इसका एक-एक अक्षर चिंतामणी रत्न समान है इसलिए नासमझ इसका मोल नहीं कर पाएगा। तथापि इसमें मैंने मंदबुद्धि से अगर कुछ कहा हो तो समदृष्टि सज्जनों तुम उसे शुद्ध करना। जैनधर्म समुद्र जैसा है, गंभीर है। इसके प्रत्येक वचन सत्य हैं। जिसमें नय और प्रमाण जैसे रत्न भरे हैं। यहाँ कही गई बात तो एक बिंदुमात्र है। विक्रम संवत १७८६ में फागण वद ५ गुरुवार के दिन इसकी रचना की है।**

समग्रदृष्टि से यह कृति अध्यात्म भाव जागृत करने में सहायक बनती है। अनेक धार्मिक बातों के साथ इसमें आत्मभाव प्राप्त करने के उपाय भी दिखायी देते हैं।

(उपाध्याय श्री हंसरत्नगणि इस कृति के कर्ता हैं।) अपने नाम का उल्लेख कृति की अंतिम १०८वीं कडी में किया है। परंतु उसमें अपनी पदवी का उल्लेख नहीं किया है। वे प्रसिद्ध कवि उदयरत्न म. के सगे भाई थे। ये दोनों भाई मूलत: खेडा गाम के वतनी थे। उनके नाम क्रमश: हरखचंद अथवा हेमराज और उत्तमचंद थे। वे जाति से पोरवाल थे। उनके पिता का नाम वर्धमान और माता का नाम मानबाई था। उनके संयम जीवन में वे पं. हर्षरत्न गणी और पं. हंसरत्न गणी के नाम से जाने जाते थे। वो एक महान त्यागी, तपस्वी, शुद्ध संयमी और साथ ही गीतार्थ थे। **भट्टा. श्री दयारत्नसूरिजी** ने महो. **सिद्धिरत्नगणी** के स्वर्गगमन के बाद उन्हें उपाध्याय बनाया था। उपा. **हंसरत्नगणि** ने वि. सं.१७९७ में मियागाम चौमासे में भगवतीसूत्र का व्याख्यान दिया था और यहीं पर वि.सं. १७९८ में चैत्र सु. १० के दिन उनका स्वर्गगमन हुआ। उनके अग्नि संस्कार के स्थान पर समाधि स्तूप का निर्माण हुआ जो आज भी विद्यमान है।

(मूल गुजराती लेख का हिंदी अनुवाद- ओमजी ओसवाल)

(चित्र सौजन्य- आनंदघनजी आत्मानुभूति)

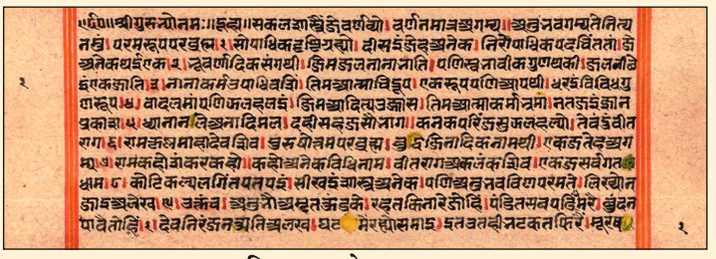

शिक्षाशत दोधक हस्तप्रत

समाचार

- दि. ०७-०८-२०२२ के दिन पूज्य मुनिराज श्री प्रशमरतिविजयजी म.सा की पावन निश्रामें भद्रावती में पूज्य मुनिराज श्री **प्रशमरतिविजयजी** म.सा. (देवर्धि) द्वारा लिखित गुजराती पुस्तक **संवेगकथा** का विमोचन श्री **भद्रावती तीर्थ मंडल के ट्रस्टीगण** के द्वारा सहर्ष संपन्न हुआ।
- दि. २२-०८-२०२२ के दिन परम पूज्य जीर्णोद्धार ज्योतिर्धर आचार्यदेव श्री **विजयमुक्तिप्रभसूरीश्वरजी** म.सा. की पावन निश्रा में श्री **भवानीपुर जैन श्वेतांबर मूर्तिपूजक संघ,** कोलकाता में श्री **गुजराती जैन श्वेतांबर मूर्तिपूजक तपागच्छ संघ** संचालित हस्तलिखित भंडार, केनींग स्ट्रीट के **श्रुतभवन संशोधन केंद्र** द्वारा प्रकाशित सूचिपत्र का विमोचन संपन्न हुआ।
- दि. २८-०८-२०२२ के दिन श्रुतरत्न पूज्य गणिवर्य श्री **वैराग्यरतिविजयजी** म.सा. की निश्रा में हाईड पार्क संघ में तेजस्वी प्रतिभासंपन्न कविरत्न पूज्य मुनिराज श्री **प्रशमरतिविजयजी** म.सा. (देवर्धि) लिखित **संवेगकथा** तथा विक्रम संवत२०७७ के चातुर्मास प्रवचनों का सारांश **हाईट ओफ हाईड पार्क** पुस्तक का विमोचन संपन्न हुआ।

क्षमायाचना

तमारां बारणे आजे तमारो मित्र आव्यो छे
नयनमां आंसुओ हैये क्षमाना भाव लाव्यो छे...

मने मारी भूलो माटे घणो अफसोस छे मनमां
न कोई पूर्वग्रह, नाराजगी के रोष छे मनमां
तमोने दु:ख दईने में करी छे भूल बहु मोटी
मने समजाय छे आजे के मारी वात छे खोटी
नकामी वातमां में तो समय पुष्कळ गुमाव्यो छे.नयनमां....१

पडे छे गांठ हैयामां तो कडवुं थाय छे जीवन
खूले जो गांठ हैयानी तो अंतर थाय छे पावन
तमे माफी मने दई दो स्वीकारी लो क्षमा मारी
न मनमां कोई दु:ख बचे एवी धरीए समजदारी
सकल शास्त्रोए उपशमने धरमनो मरम गणाव्यो छे.नयनमां....२

-रचना:- देवर्धि

पिछले साल श्रुत की सेवा करते
सेवा में कुछ दोष रह गया हो या कुछ दुर्भाव हो गया हो तो
श्रमणप्रधान श्री चतुर्विध संघ की और सभी समुदार सहयोगिओं से
क्षमा चाहते हैं।

श्रुतदीप रिसर्च फाउंडेशन
श्रुतभवन संशोधन केंद्र
श्रुतभवन परिवार

कार्यविवरण

शास्त्र संशोधन प्रकल्प अंतर्गत **लोकप्रकाश, उपा.श्रीविनयविजयजी कृतिसंग्रह, पं.श्री नेमकुशलजी कृतिसंग्रह, छंदोरत्नावली, मालापिंगल** का संपादन कार्य वर्तमान है। पू.सा.श्री **मधुरहंसाश्रीजी म. प्रीतछत्रीसी** का लिप्यंतर कर रहे हैं। पू.सा.**श्री धन्यहंसाश्रीजी म. गौतमस्वामी** सज्झाय आदि ग्रंथों का लिप्यंतर कर रहे हैं। अभ्यास वर्ग प्रकल्प में विभिन्न ग्रंथों का लिप्यंतर कार्य वर्तमान है।

वर्धमान जिनरत्नकोश प्रकल्प अंतर्गत पू. आ. **श्री मुनिचंद्रसू. म.सा.**, पू. आ. **श्री हर्षवर्धनसू. म.सा.**, पू. आ. **श्री धर्मशेखरसू. म.सा.**, पू. उपा. **श्री भुवनचंद्रजी म.सा.**, पू. मु. **श्री उदयरत्नवि. म.सा.**, पू. मु. **श्री शीलचंद्रवि. म.सा.**, पू. मु. **श्री सुयशचंद्रवि. म.सा.**, पू. मु. **श्री भव्यसुंदरवि. म.सा.**, पू. मु. **श्री श्रुतांगचंद्रवि. म.सा.**, पू. मु. **श्री कल्पभूषणवि. म.सा.**, पू. मु. **श्री चंद्रदर्शनवि. म.सा.**, पू. मु. **श्री सत्योदयवि. म.सा.**, पू. मु. **श्री मुक्तिश्रमणवि. म.सा.**, पू. मु. **श्री वंदनरुचिवि. म.सा.**, पू. मु. **श्री नीरज मुनिजी म.सा.**, पू. सा. **श्री दीक्षितरत्नाश्रीजी म.सा.**, **श्री ऋषभ भंडारी** तथा **डॉ. शीतल शाह** को हस्तप्रत संबंधि माहिती प्रदान करने का लाभ मिला।

प्राचीन श्रुतसंपदा के समुद्धार के लिए समुदार सहयोग देनेवाले महानुभाव

- आ.श्री हेमवल्लभसू.की प्रेरणा से
  श्री सहसावन कल्याणकभूमि तीर्थोद्धार समिति, जुनागढ
- श्री हरेशभाई कांतिलाल शाह, पुणे
- श्री मरचंट सोसायटी जैन संघ, अहमदाबाद
- पू. आ. श्री मुक्तिप्रभसूरीश्वरजी म.सा. की प्रेरणा से
  श्री भवानीपूर मूर्तिपूजक जैन श्वेतांबर संघ, कोलकाता
- श्री अभयजी श्रीश्रीमाळ (अभूषा फाउंडेशन), चेन्नई
- मु.श्री प्रभुशासनरत्नवि.की प्रेरणा से
  श्री सहस्त्रफणा श्वेतांबर मूर्तिपूजक तपागच्छ जैन संघ, मुंबई
- श्री जुहू स्कीम जैन संघ, मुंबई
- पू. आ. श्री मुक्तिप्रभसूरीश्वरजी म.सा. की प्रेरणा से
  श्री गुजराती जैन श्वेतांबर मूर्तिपूजक तपागच्छ संघ, कोलकाता
- श्री मैसुर महिला सामायिक मंडल, मैसुर
- श्री आदिनाथ तपागच्छ श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ, सूरत
- श्री बी.यू. भंडारी मोटर्स प्रा. लि., पुणे
- श्री कीर्तिकुमार डी. ओसवाल, पुणे
- श्री कांतीलालजी फत्तेचंदजी छाजेड, पुणे
- श्री जैन श्वेतांबर मूर्तिपूजक गुजराती पंच, मालेगाव
- जैन जागृति सेंटर, वापी
- श्री मुकेशकुमार श्रीश्रीमाल, पुणे
- श्री हसमुखलाल मनसुखलाल शाह, मुंबई
- श्री सिद्धार्थ रतिलाल शाह, अहमदाबाद
- सौ. कविताबेन रितेशभाई कोठारी, पुणे
- श्री सुधीरभाई एस. कापडीया, मुंबई
- पू. मुनिश्री प्रशमरतिविजयजी म.सा. की प्रेरणा से
  श्री आत्मोद्धारक ट्रस्ट, श्री विमलनाथस्वामी प्रासाद, हिंगणघाट

प्रतिभाव

The whole experience was unique. The Shrutbhavan, its work of Conservation, Preservation, Digitalization and Usability is worth all the efforts. It is a mammoth task taken by this foundation, by the entire team and specially Maharaj Saheb Pujya Vairagyarativijayji. It is of great value for research scholars like us.

- Shilpa Vijay Shah (High Court Advocate, Surat)

सुवाक्य

श्रद्धा जिज्ञासा बलैं, सदगुरु चरण पसाइं ।
ते पणि दृढ अभ्यासथी, लहे थोडा दिनमांहि ॥९५॥

ते - अनुभव

- उपा. हंसरत्न ग.
- शिक्षाशत दोधक

Printed Matter

Posted under clause 121 & 114 (7) of P & T Guide

To,

From : Shrutbhavan Research Centre
(Initiation of Shrutdeep Research Foundation)
47/48, Achal Farm, Nr. Sachchai Mata Mandir, Ahead of Jain Agam Temple, Katraj, Pune-411046
Mo. 07744005728 Email : shrutbhavan@gmail.com Website : www.shrutbhavan.org

For Informative and Inspirational speeches about Shrut please subscribe our Shrutbhavan YouTube channel
Shrutbhavan Pune